INTERNATIONAL JOURNAL OF NOVEL RESEARCH AND DEVELOPMENT (IJNRD)
© 2026 IJNRD | Volume 11, Issue 5, May 2026 | ISSN: 2456-4184 | IJNRD.ORG

# "संत कबीर और गुरु नानक देव की भक्ति में सामाजिक समता का स्वर"

**डॉ नवनीत कौर**
सहायक प्रोफेसर हिन्दी
संत मोहन सिंह खालसा लबाना गर्ल्स कॉलेज बराडा,अंबाला
navi.kaur45@gmail.com

**सारांश** - संत कबीर दास और गुरु नानक देव भक्तिकाल की निर्गुण धारा के दो प्रमुख स्तंभों माने जाते हैं। दोनों संतों ने अपने समय के धार्मिक आडंबर, जातिगत भेदभाव और बाहरी कर्मकांडों का डटकर विरोध किया और मनुष्य को उसके भीतर बसे ईश्वर से जोड़ने का मार्ग दिखाया। इनकी भक्ति किसी मंदिर-मस्जिद की दीवारों में नहीं बंधी थी, बल्कि वह जन-साधारण के जीवन की सांसों में बसी हुई थी। दोनों संतों का दृढ़ विश्वास था कि ईश्वर तक पहुँचने के लिए किसी मध्यस्थ, किसी विशेष विधि या किसी विशेष स्थान की आवश्यकता नहीं है। मन की निर्मलता, सच्चा प्रेम और निरंतर नाम-स्मरण ही पर्याप्त है। इसी सहज साधना को उन्होंने जीवन का मूल मंत्र बनाया। यही कारण है कि आज पाँच सौ वर्ष बाद भी इनके शब्द और वाणी आम जन की जुबान पर हैं।

**मुख्य शब्द** – निराकार, अविनासी , परम ब्रह्म, एकेश्वरवाद, अलख, अगोचर, वर्णनातीत, भावनात्मक रहस्यवाद, उलटबाँसियों, ईश्वर-कृपा, समाज-सुधारक, मानवतावादी ,युग-द्रष्टा , प्रेम, समानता और नाम-स्मरण।

संत कबीर दास और गुरु नानक देव दोनों ने ईश्वर को निराकार और निर्गुण माना। कबीर के लिए वह 'राम' शब्द मात्र एक संबोधन था, जो घट-घट में रम रहा है, इसलिए वे कहते हैं, "निर्गुण राम जपहु रे भाई"। "परंतु यह राम या हरि कौन है ? परंब्रह्म, अपरंब्रह्म, ईश्वर या और कुछ ?.... जगत् के जितने

साधक हैं, सिद्ध हैं, पैगंबर हैं, वे इस एक की ही पूजा करते हैं। अनंत हैं इसके नाम, अपरंपार उसका स्वरूप । वही कबीरदास का भगवान है ।"[i] वहीं नानक ने 'एक ओंकार सतनाम' के माध्यम से उसी एक, सच्चे, निराकार करतार की ओर संकेत किया। डॉ. नित्यानंद शर्मा के अनुसार "नाम जप के द्वारा ही अद्वितीय सत्ता के साथ सुरति योग या तादात्म्य में की स्थापना होती है। इसे रहिरास कहा जाता है। रहि का अर्थ है एकांत तथा रास का अर्थ है रमण या तादात्म्य ।"[ii]

"कबीर निराकार बादी थे। निराकार की प्राप्ति ज्ञान से संभव है। वह घट में बसता है, उसे बाहर खोजने की आवश्यकता नहीं है। उनका कहना है- 'हिरदै सरोवर है अविनासी"। कबीर ने बार-बार 'राम' शब्द का प्रयोग किया है, किन्तु उनका राम सगुण अर्थात् दाशरथि राम न होकर परम ब्रह्म का प्रतीक है। कबीर राम को पुकारने की आवश्यकता निश्चित रूप से महसूस करते हैं, इसलिए उन्हें कोई न कोई नाम भी देना. ही पड़ता है। उनके ही शब्दों में-

**दशरथ सुतं तिहु लोक बखाना। राम नाम का मरम है आना ।।**
**तू हरखि गुण गाई ।।"[iii]**

कबीर ने जहाँ अपनी उलटबाँसियों और साखियों के माध्यम से पाखंड पर तीखा प्रहार किया, वहीं नानक ने प्रेम और करुणा के मधुर शब्दों से लोगों के हृदय जोड़े। कबीर की वाणी में आग थी जो जाति-पाँति, मूर्ति-पूजा, रोज़ा-नमाज़ के दिखावे को जलाकर राख कर देती थी। वे स्पष्ट कहते थे, "पाहन पूजे हरि मिले तो मैं पूजूँ पहार"।"कबीर एकेश्वरवादी हैं, किन्तु उनका एकेश्वरवाद मुस्लिम एकेश्वरवाद से भिन्न पड़ता है। मुसलमान धर्म के अनुसार-ईश्वर समस्त प्राणियों और स्थानों से भिन्न और प्ररम समर्थ है। परंतु कबीर द्वारा प्रतिपादित ईश्वर व्यापक है, वह समस्त संसार में रम रहा है। वह अलख, अगोचर और वर्णनातीत है। वह केवल शास्त्रों और पुराणों के अध्ययन एवं ज्ञान से नहीं जाना जाता है। बल्कि वह प्रेमपूर्ण भक्ति से प्राप्य है। निर्गुण राम और भक्ति-तत्व कबीर को सिद्धों और नाथों से अलग कर देते हैं और इसी कारण कबीर में अधिक सरसता आ गई है। कबीर की भक्ति अनन्य भाव से संपन्न है। उनमें कर्मकांड के विधि-विधानों और बाह्याचारों के लिए अवकाश ही नहीं है, वह सर्वथा निष्काम है।

भक्ति के मार्ग में माया कनक और कामिनी के रूप में व्यवधान डालती है, अतः कबीर ने इसकी कटु भर्त्सना की है। कबीर की भक्ति एक ऐसा राज-मार्ग है जिस पर सभी सुगमता से चल सकते हैं, उसमें ऊंच-नीच, ब्राह्मण, शूद्र और स्पृश्यास्पृश्य का कोई प्रश्न नहीं है-

**जाति पांति पूछे नहिं कोई, हरि को भजे सो हरि का होई।"**[iv]

वहीँ गुरु नानक देव अपने व्यक्तित्व में दार्शनिक, योगी, गृहस्थ, धर्म सुधारक, समाज सुधारक, कवि और विश्वबन्धु इत्यादि सभी गुण समेटे हुए थे। नाम भक्ति का प्रचार प्रसार करने के लिए इन्होंने अनेक उदासियाँ की ।डॉ. नित्यानंद शर्मा गुरु नानक देव के विषय में लिखते हैं ,"गुरु नानक एक भक्त उपदेशक के रूप में सामने आए। उन्होंने खंडन मंडन की प्रवृत्ति का पूर्ण परित्याग किया। वह सर्वोत्तम स्वरूप परमात्मा के ओंकार रूप के ध्यान को महत्व देने लगे। भक्ति योग के लिए नाम जप को महत्ता मिली।"[v]

कबीर की प्रेम की भावना ने भक्ति को सरल और मधुर बना दिया। कबीर ने प्रेम और भक्ति के माध्यम से ईश्वर से एकात्म स्थापित करने की कोशिश की, और यहीं से एक शुद्ध भावनात्मक रहस्यवाद का जन्म हुआ। वैसे तो कबीर ने परमात्मा को माता-पिता जैसे कई रूपों में देखकर उनसे रिश्ता जोड़ने का प्रयास किया, लेकिन आत्मा को पत्नी और परमात्मा को पति मानकर उन्होंने प्रेम का एक श्रेष्ठ भारतीय आदर्श प्रस्तुत किया, जो बहुत ही गरिमामय और सुंदर है। "सन्त-मत के समस्त कवियों में कवि कबीर सबसे अधिक प्रतिभाशाली एवं मौलिक थे। उन्होंने कविता लिखने की प्रतिज्ञा करके कहीं पर कुछ नहीं लिखा है, न उन्हें पिंगल और अलंकारों का ज्ञान था, तथापि उनमें काव्यानुभूति इतनी प्रबल एवं उत्कृष्ट थी कि वे सरलता के साथ महाकवि कहलाने के अधिकारी हैं। सत्य यह है कि उनकी कविता में छन्द, अलंकार, शब्द-शक्ति आदि गौण हैं और सन्देश देने की प्रवृत्ति प्रधान है। इन सन्देशों में आनेवाली पीढ़ियों के लिए प्रेरणा, पथ-प्रदर्शन तथा संवेदना की भावना सन्निहित है। अलंकारों से सुसज्जित न होते हुए भी उनके सन्देश काव्यमय हैं। कबीर भावना की अनुभूति से युक्त, उत्कृष्ट

रहस्यवादी, जीवन का संवेदनशील संस्पर्श करनेवाले और मर्यादा के रक्षक कवि थे। उन्होंने स्वतः कहा है : "तुम जिन जानो गीत है, यह निज ब्रह्म विचार।" पथभ्रष्ट समाज को उचित मार्ग पर लाना ही उनका प्रधान लक्ष्य है।"[vi] एक कवि के तौर पर कबीर जीवन के बेहद करीब नज़र आते हैं। उनकी रचनाओं की सबसे बड़ी खूबी है सहजता — यही उनका सबसे बड़ा सौंदर्य और कला का गुण भी है। कबीर का काव्य अपने अनुभव और सच्चाई पर टिका है। खुद उन्होंने कहा: "मैं कहता हूं आंखिन देखी, तू कहता कागद की लेखी।"स्वभाव से विद्रोही, मूल रूप से समाज-सुधारक, हालात के कारण धर्म-सुधारक, सोच में प्रगतिशील दार्शनिक और जरूरत पड़ने पर कवि — कबीर के कई रूप थे। उनका पूरा व्यक्तित्व उनकी रचनाओं में झलकता है। मोटे तौर पर कबीर के विचार दो हिस्सों में बंटते हैं:- रचनात्मक पक्ष: इसमें वे सतगुरु, नाम, विश्वास, धैर्य, दया, विचार, उदारता, क्षमा, संतोष जैसे विषयों पर सीधी-सादी शैली में बात करते हैं। यहां वे इंसान की कमियों पर उंगली नहीं उठाते। आलोचनात्मक पक्ष: यहां कबीर एक आलोचक, सुधारक, मार्गदर्शक और समन्वयकर्ता बन जाते हैं। इस हिस्से में चेतावनी, दिखावे, कुसंग, माया, मन की चंचलता, छल-कपट, धन और वासना जैसी बातों पर वे खुलकर प्रहार करते हैं। इनकी भक्ति केवल व्यक्तिगत मुक्ति का साधन नहीं थी, बल्कि एक सामाजिक आंदोलन भी थी। दूसरी ओर नानक की वाणी शीतल जल की तरह थी जो तप्त समाज को शांति और भाईचारे का संदेश देती थी। उन्होंने संगत और पंगत की परंपरा शुरू करके व्यवहार में समानता का पाठ पढ़ाया। लंगर में राजा और रंक एक पंक्ति में बैठकर भोजन करते थे, यही उनका सबसे बड़ा उपदेश था। गुरु नानक देव जी ने "सभी दिशाओं में यात्राएं की थीं। इस सन्दर्भ में सभी धर्मों और मतों के अनुयायी सन्तों से उनकी भेंट होती रहती थी। फलस्वरूप समाज और धर्म के सम्बन्ध में उनकी विचारधारा अनुभूति तथा समन्वय पर आधारित है। ...कबीर की भांति उनके काव्य में भी शान्त रस की निर्बाध धारा प्रवाहित हुई है, यद्यपि कहीं-कहीं करुण, अद्भुत आदि कुछ अन्य रसों के अनुकूल सामग्री भी प्राप्त होती है। नानक के अनुसार ईश्वर-कृपा से तत्त्व-दर्शन तो हो जाता है, किन्तु उस अनुभव की अभिव्यक्ति सदैव नहीं हो पाती।" [vii]

मध्यकालीन भारत का समाज जाति-पाँति, ऊँच-नीच, हिन्दू-मुसलमान के भेद और धार्मिक आडंबरों की बेड़ियों में जकड़ा हुआ था। ऐसे समय में कबीर दास और गुरु नानक देव दो ऐसे संत-कवि हुए जिन्होंने भक्ति को केवल मोक्ष का साधन न बनाकर समाज में बराबरी और भाईचारे की मशाल बना दिया। इन दोनों की भक्ति-भावना का सबसे प्रखर स्वर सामाजिक समता का स्वर है, जिसने धर्म की दीवारों को तोड़ा और मानव को मानव से जोड़ा। "गुरु नानक ने अपने सिद्धान्तों में संस्कारवाद के विरोध, देवतावाद की अस्वीकृति, ऊँच-नीच के भेद-भाव के निवारण, सत्य की स्थापना और अकाल पुरुष की उपासना आदि का उपदेश दिया ।"[viii]

आज के युग में जब फिर से धर्म, जाति और संप्रदाय के नाम पर दीवारें खड़ी की जा रही हैं, कबीर और नानक की भक्ति में निहित सामाजिक समता का स्वर और भी प्रासंगिक हो जाता है। दोनों संतों ने सिखाया कि ईश्वर को पाने का रास्ता किसी खास जाति, धर्म या कर्मकांड से होकर नहीं जाता, वह सीधा मनुष्य के प्रेम, सेवा और बराबरी के व्यवहार से होकर जाता है। उनकी भक्ति ने हमें बताया कि सच्चा धार्मिक वही है जो भूखे को रोटी दे, गिरे हुए को उठाए और सबको अपने समान समझे। इस अर्थ में कबीर और नानक केवल भक्त नहीं थे, वे समाज-सुधारक, मानवतावादी और युग-द्रष्टा थे। उनकी वाणी में गूँजता समता का स्वर आज भी हमें एक बेहतर, न्यायपूर्ण और प्रेमपूर्ण समाज बनाने की प्रेरणा देता है। "उपासना में इन्होंने राम की महत्ता स्वीकार की है, किन्तु वे दशरथी राम के उपासक न थे- "दशरथ सुत तिहु लोक बखाना, राम की मरम काहू नहिं जाना ।" ये निराकार रूप के उपासक थे, और एक ही रूप को सारे संसार में देखते थे ।" [ix]

भाषा और शैली की दृष्टि से भी दोनों अपनी मिट्टी से जुड़े हुए थे। कबीर की भाषा सधुक्कड़ी है, जिसमें खड़ी बोली, अवधी, राजस्थानी और पंजाबी का अद्भुत मेल है। वे पढ़े-लिखे नहीं थे, इसलिए उनके शब्द सीधे अनुभव से निकले हैं — "मैं कहता हूं आंखिन देखी"। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के अनुसार "कबीर दास की वाणी वह लता है जो योग के क्षेत्र में भक्ति का बीज पढ़ने से अंकुरित हुई थी।"[x] नानक की भाषा मुख्यतः पंजाबी है, पर उसमें फारसी और संस्कृत के शब्द भी सहज रूप से घुल-मिल गए हैं। उनकी बानी 'जपुजी साहिब' और 'आसा दी वार' में दर्शन और काव्य का सुंदर संगम दिखाई देता है।

निष्कर्ष -संक्षेप में, कबीर और नानक की भक्ति-भावना का मूल स्वर एक ही है — प्रेम, समानता और नाम-स्मरण। कबीर यदि भक्ति को तलवार बनाकर कुप्रथाओं का सिर काटते हैं, तो नानक उसे मरहम बनाकर घावों को भरते हैं। एक में क्रांति का तेज है, दूसरे में करुणा की दीप्ति। परंतु दोनों का लक्ष्य अभिन्न है: उस एक परम सत्ता से जुड़ना और मानव को मानव से जोड़ना। कबीर ने प्रेम के ढाई आखर पढ़ाए और नानक ने कहा कि जिसने प्रेम किया उसी ने प्रभु को पाया। इस प्रकार दोनों संतों ने भारतीय भक्ति-आंदोलन को मधुर, सहज और मानवीय बना दिया, और युगों-युगों तक के लिए एक आलोक-स्तंभ छोड़ गए।

## संदर्भ सूची

[i] आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, कबीर[ कबीर के व्यक्तित्व, साहित्य और दार्शनिक विचारों की आलोचना ], राजकमल प्रकाशन,नयी दिल्ली ,छात्र संस्करण -1990, पृष्ठ-97

[ii] डॉ नित्यानंद शर्मा ,हिंदी काव्य में भक्ति का स्वरूप, नई दिल्ली, आशा प्रकाशन ग्राहक विद्या संस्करण 1991, पृष्ठ-105

[iii] डॉ. शिवकुमार शर्मा, हिन्दी साहित्यः युग और प्रवृत्तियाँ, सोलहवाँ संस्करण, अशोक प्रकाशन ,नई सड़क, दिल्ली, पृष्ठ 138

[iv] वही ,पृष्ठ 138

[v] डॉ नित्यानंद शर्मा ,हिंदी काव्य में भक्ति का स्वरूप, नई दिल्ली, आशा प्रकाशन ग्राहक विद्या संस्करण 1991, पृष्ठ-105

[vi] डॉ. नगेन्द्र(संपादक) ,हिन्दी साहित्य का इतिहास ,मयूर पेपरबैक्स ,नोएडा ,1973, पृष्ठ 127

[vii] वही ,पृष्ठ 131

[viii] डॉ. चातक एवं प्रो० राजकुमार शर्मा. हिन्दी साहित्य का इतिहास आदिकाल, भक्तिकाल एवं आधुनिक काल ,कॉलेज बुक डिपो, जयपुर-2 (राजस्थान),1997, पृष्ठ 109

[ix] वही ,पृष्ठ 105

[x] आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, कबीर[ कबीर के व्यक्तित्व, साहित्य और दार्शनिक विचारों की आलोचना ], राजकमल प्रकाशन,नयी दिल्ली ,छात्र संस्करण -1990, पृष्ठ-123

**Copyright & License:**
© Authors retain the copyright of this article. This work is published under the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY 4.0), permitting unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.